© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

सूत्रकाल में नारी–अधिकार

डॉ0 ऋतु शुक्ला
असि0 प्रो0 संस्कृत
राजकीय महाविद्यालय
तालबेहट, ललितपुर (उ0प्र0)

वेद–वेदांगो तथा उपनिषदों के पश्चात् सूत्रों का काल प्रारम्भ होता है। यज्ञ विषयक विस्तृत एवं जटिल साहित्य को क्रमबद्ध एवं संक्षिप्त रूप देने के लिए सूत्र शैली का प्रयोग हुआ। फलतः संक्षिप्त नियमों के रूप में एकत्रित किए हुए शास्त्रीय अनुशासन के ग्रन्थ 'सूत्र' कहलाए जाने लगे। सूत्रों की मुख्य विशेषता थी 'अधिक से अधिक सामग्री को कम से कम शब्दों में' निबद्ध कर प्रस्तुत करना। सूत्रों की प्रधानता के कारण ही इस काल को सूत्रकाल कहा जाता था। सूत्र साहित्य गद्य एवं पद्य दोनों में प्राप्त होता है।

वैदिक काल में नारी की दशा के चिन्तन–मनन के पश्चात् सूत्रकाल में उसकी सर्वांगीण स्थिति का विश्लेषण अपेक्षित है। सूत्रकाल में स्त्रियों की दशा वैदिक काल की तुलना में हीन दिखाई पड़ती है तथापि स्त्रियों को परिवार एवं समाज में सम्मानित स्थान प्राप्त था जिसे निम्नांकित रूप में वर्णित किया जा सकता है।

सूत्रों में कन्या के जन्म की कहीं भी निन्दा नहीं की गई है।[1] पुत्र की भाँति पुत्री का लालन–पालन होता था। आपस्तम्ब गृह्यसूत्र में एक स्थान पर उल्लिखित है कि गृहस्थ यात्रा से लौटने के पश्चात् अपनी पुत्री के मस्तक का पुत्र की भाँति मन्त्रोच्चारण पूर्वक चुम्बन करें।[2] जबकि आश्वलायन तथा पारस्करगृह्यसूत्र में इस क्रिया को मन्त्र रहित करने का निर्देश दिया गया है।[3] इस तथ्य से पुत्री के प्रति स्नेहपूर्ण व्यवहार की पुष्टि होती है।

(i) शिक्षा का अधिकार – सूत्रकालीन समाज में नारी शिक्षा के भी पर्याप्त उल्लेख प्राप्त होते हैं। आश्वलायन गृह्यसूत्र में स्त्रियों के समावर्तन संस्कार का उल्लेख है।[4] यह संस्कार ब्रह्मचर्याश्रम की समाप्ति के पश्चात होता था। इससे स्पष्ट होता है कि स्त्रियाँ भी ब्रह्मचर्याश्रम का पालन करते हुए शिक्षा ग्रहण करती थीं। गोभिल गृह्यसूत्र में विवाह के अवसर पर वर एवं वधू द्वारा साथ–साथ मन्त्रोच्चार करने का विवरण प्राप्त होता है।[5] इसी प्रकार काठक गृह्यसूत्र में दोनों व्यक्तियों द्वारा अनुवाक् पाठ किए जाने का उल्लेख है। इन उद्धरणों से स्पष्ट होता है कि नर के साथ नारी को भी वैदिक ज्ञान होता था। आश्वलायन गृह्यसूत्र में ऋषि–तर्पण के समय

गार्गी–वाचक्नवी, बड़वा–प्रतिथेयी तथा सुलभा–मैत्रेयी आदि ऋषि नारियों के नाम लेने का आदेश है। इससे तद्युगीन समाज में विदुषी नारियों की सम्मानजनक स्थिति की पुष्टि होती है।

वैदिक ज्ञान के अतिरिक्त नारियाँ अन्य कलाओं जैसे–संगीत, नृत्य आदि में भी दक्ष होती थीं। शंखलिखित गृह्यसूत्र में चार तथा आठ–स्त्रियों द्वारा नृत्य करने का विवरण मिलता है। काठक गृह्यसूत्र के अनुसार विवाह योग्य कन्या का उसके विवाह की पूर्व सन्ध्या पर मृदंग इत्यादि वाद्यों को बजाने का वर्णन प्राप्त होता है। अतः सूत्रकालीन समाज में नारी को उपनयन, वेदाध्ययन, ब्रह्मचर्य आश्रम का पालन तथा सर्वांगीण रूप से शिक्षित होने का पूर्ण अधिकार प्राप्त था।

(ii) विवाह सम्बन्धी अधिकार – उस समाज में स्वयंवर के उल्लेख मिलते हैं जिसमें स्त्रियों द्वारा विवाह के सम्बन्ध में निर्णय लेने के अधिकार की पुष्टि होती है। गौतम तथा विष्णु धर्मसूत्र के अनुसार यदि पिता आदि अभिभावक कन्या का विवाह करने में असमर्थ रहें, तो कन्या स्वयं उत्तम पति का वरण करने हेतु स्वतन्त्र है।[6] सूत्रों द्वारा गान्धर्व विवाह को भी मान्यता प्रदान करना नारी के विवाह सम्बन्धी अधिकारों का सबल प्रमाण है। तद्युगीन समाज में एक पत्नीकता का प्रचलन था। पुरुष को एक विवाह करने की अनुमति थी। आपस्तम्ब का कथन है कि प्रजावती धर्मपत्नी के होते हुए मनुष्य को दूसरा विवाह नहीं करना चाहिए।[7] धर्मसूत्रकार अकारण अपनी धर्मपत्नी का त्याग करने वाले पुरुष को पातकी मानते हैं।[8] अन्तर्जातीय विवाह के दृष्टान्त भी सूत्र साहित्य में दिखाई पड़ते हैं। बौधायन तथा विष्णु धर्मसूत्र द्वारा अनुलोम विवाह को स्वीकृति प्रदान की गई है।[9] सूत्रकालीन समाज में कुछ परिस्थितियों में स्त्री को पुनर्विवाह का अधिकार भी प्राप्त था। बौधायन के अनुसार दीर्घकाल तक पति के प्रवास पर रहने पर स्त्री पुनर्विवाह कर सकती थी।[10]

धर्मसूत्रकारों ने ऐसी विधवा को भी विवाह हेतु स्वीकृति प्रदान की है जिसका पति से समागम न हुआ हो। वसिष्ठ के अनुसार जिस स्त्री का मन्त्रों के साथ विवाह हुआ हो किन्तु अपने पति से सम्बन्ध न हुआ हो, तो उसका पुनः विवाह संस्कार हो सकता है।[11] बौधायन भी अभुक्त विधवा को पुनर्विवाह की आज्ञा देते हैं[12] बौधायन तथा वसिष्ठ दोनों ने पुनर्भू स्त्री का वर्णन किया है। पुनर्भू उस स्त्री को कहते हैं जो पुनर्विवाह करती थी।

(iii) सम्बन्ध–विच्छेद का अधिकार – तत्कालीन समाज में सम्बन्ध विच्छेद के संकेत भी प्राप्त होते हैं। वसिष्ठ की व्यवस्था से सिद्ध होता है कि पति के प्रव्रजित होने पर स्त्री उससे अपना सम्बन्ध विच्छेद कर सकती थी।[13] उनके द्वारा पुनर्भू स्त्री का अर्थ बताते हुए जो कुछ लिखा है उससे यह प्रकट होता है कि तत्कालीन समाज में पति के क्लीव, पतित अथवा उन्मत्त होने पर भी स्त्री सम्बन्ध–विच्छेद कर सकती थी।[14] परन्तु

साधारण परिस्थिति में पति–पत्नी का सम्बन्ध अविच्छेद्य समझा जाता था। सम्बन्ध विच्छेद का अधिकार होते हुए भी स्त्रियाँ उसका उपयोग नहीं करती थीं।

(iv) पर्दा–प्रथा का अभाव – सूत्रकाल में स्त्रियाँ सामाजिक तथा धार्मिक सभी गतिविधियों में मुक्त रूप से भाग लेने हेतु स्वतन्त्र थीं। श्रौतसूत्रों में स्त्रियों द्वारा यज्ञ के अवसर पर भाग लेने का वर्णन मिलता है। काठक गृह्यसूत्रों में स्त्रियों द्वारा महाव्रत, अश्वमेध तथा वाजपेय यज्ञ में भाग लेने[15] के विवरण से उस समाज में पर्दा प्रथा के अभाव की पुष्टि होती है। सूत्रकारों का कथन है कि विवाह के पश्चात् अपने ग्राम को लौटते हुए वर अपनी नवविवाहित स्त्री को मार्ग के ग्रामीणाओं को दिखाते हुए एक वैदिक श्लोक पढ़ता था।[16] इस समय वधु के मुख पर किसी प्रकार के अवगुण्ठन का चिन्ह नहीं मिलता है।

(v) धार्मिक क्षेत्र में अधिकार – धर्मसूत्रों के पति के अनुकूल एवं अधीन बने रहना ही नारी का श्रेष्ठ धर्म बताया गया है। गौतम का कथन है कि श्रौत अथवा गृह्य किसी भी प्रकार के धर्मकार्य में नारी स्वतन्त्र नहीं होती अपितु पति द्वारा कृत धर्मानुष्ठानों का अनुसरण करती है।[17] नारी पुरुष की सहधर्मिणी के रूप में प्रशंसित एवं सम्मानित होती थी। नृयज्ञ तथा बलिवैश्वदेव यज्ञ में स्त्री का प्रमुख योगदान होता था। गृहस्थाश्रम तथा वानप्रस्थाश्रम में विहित सभी धार्मिक क्रियाओं में पत्नी को अपने पति का सहयोग देने का अधिकार प्राप्त था। परन्तु पृथक् रूप से स्त्री के लिए धार्मिक क्रियाएँ स्वीकार नहीं की गयी हैं। विष्णु धर्मसूत्र के अनुसार सौभाग्यवती नारी के लिए अन्य कोई व्रत एवं उपवास नहीं है। जो स्त्री पति के जीवित रहते ऐसा करती है वह अपने पति की आयु को क्षीण करती है तथा स्वयं मृत्यु के पश्चात् नरक प्राप्त करती है।[18] इस प्रकार सूत्रकाल में नारी पृथक् रूप से धार्मिक क्रियाओं के सम्पादन की अनधिकारिणी थी।

(vi) सम्पत्ति का अधिकार – स्त्रियों के सम्पत्ति के अधिकार के सम्बन्ध में सूत्रकाल में मिश्रित दृष्टिकोण दिखाई पड़ते हैं। बौधायन के अनुसार स्त्रियाँ शक्तिहीन होती हैं अतः सम्पत्ति की अधिकारिणी नहीं हो सकती।[19] आपस्तम्ब का कथन है कि पति के जीवित रहते पत्नी के आर्थिक अधिकार का कोई औचित्य नहीं है क्योंकि वे पति की सहभागी होती है।[20] परवर्ती धर्मसूत्रकारों के मन्तव्य में इस सम्बन्ध में कुछ उदारता दृष्टिगत होती है। विष्णु धर्मसूत्र ने पति की मृत्यु के बाद पत्नी तथा पत्नी के अभाव में पुत्री को सम्पत्ति का अधिकारिणी माना है।[21]

सम्पत्ति पर उत्तराधिकार के अतिरिक्त स्त्री के लिए पृथक् से स्त्रीधन का उल्लेख भी धर्मसूत्रों में प्राप्त होता है। गौतम, बौधायन तथा वसिष्ठ–तीनों धर्मसूत्रकारों ने माता की मृत्यु के पश्चात् स्त्रीधन पर पुत्री का अधिकार माना है।[22] इसके अतिरिक्त आपस्तम्ब ने धन के उपार्जन में भी पति–पत्नी का सहभागित्व स्वीकार किया है।[23] उन दोनों का ही परिवार की सम्पत्ति पर समान अधिकार होता है।[24]

अतः सूत्रकालीन समाज में स्त्रियों के आर्थिक हितों के संरक्षण हेतु सूत्रकारों की सजगता परिलक्षित होती हैं।

इस प्रकार सूत्र साहित्य में नारी के अधिकार तथा उसके महत्त्व से सम्बन्धित अनेक मत प्राप्त होते हैं। स्त्री को सर्वाधिक महत्त्व गृहस्थाश्रम में पत्नी के रूप में प्राप्त होता है। गृहस्वामिनी के रूप में वह घर में सम्मानित एवं प्रशंसित होती है। गृहस्थाश्रम की सभी धार्मिक क्रियाओं में वह पति की सहधर्मिणी के रूप में कार्य करने की अधिकारिणी थी। सूत्रकाल में स्त्रियों से किसी प्रकार का कर नहीं लिया जाता था।[25] माता के रूप में भी स्त्री परम सम्माननीय एवं श्रद्धेय घोषित की गई है। आचार्य गौतम ने माता का स्थान आचार्य से भी श्रेष्ठ माना है।[26] आपस्तम्ब माता के पतिता होने पर भी उसकी सेवा का निर्देश देते हैं।[27] आचार्य गौतम तथा बौधायन ने नारी को पुरुष के अधीन माना है।[28] कहीं–कहीं पर स्त्री को शूद्र के समकक्ष बना दिया गया है। चान्द्रायण आदि व्रतों में स्त्री तथा शूद्र से वार्तालाप को निषिद्ध माना गया है।[29] स्त्री के साथ यात्रा वर्जित की गई है तथा शूद्र एवं स्त्री का आचमन–नियम समान बताया गया है।[30] धर्मसूत्रों में स्त्री को यज्ञ की अधिकारिणी नहीं माना गया है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से सूत्रकालीन समाज में नारी की स्थिति पर्याप्त सन्तोषजनक नहीं दिखाई पड़ती है। कहीं–कहीं पर सूत्रकारों ने नारी को अनेक अधिकारों से अधिकृत करते हुए उसे समाज में प्रतिष्ठित स्थान प्रदान किया है। वहीं दूसरी ओर उन्होंने नारी को अनेक अधिकारो से वंचित भी किया है।

अतः नारी के प्रति सकारात्मक एवं नकारात्मक दृष्टिकोण के सम्यक् विश्लेषण के अनन्तर सूत्रकाल में नारी की स्थिति अपने पूर्ववर्ती काल के सापेक्ष कुछ निम्न दिखाई पड़ती है।

सन्दर्भः–

1. Ram Gopal-India of Vedic Kalpsutras P.441
2. आपस्तम्बगृह्यसूत्र–6.15.13
3. आश्व0गृ0सू0–1.15.12, पार0गृ0सू0–1.18.6
4. आश्व0गृ0–3.8.11
5. गोभिल 2.1.11.–20
6. त्रीन्कुमार्यृतूनतीत्य स्वयं सुज्येतानिन्दितेनात्सृज्य पित्र्यानलंकारान्। गौ0–2.9.20
   ऋतुत्रयमुपास्यैव कन्या कुर्यात् स्वयंवरम्।
   ऋतुत्रये व्यतीते तु प्रभवत्यामनः सदा।। वि0 24.40
7. आप0 ध0 सू0 – 2.5.11.12
8. आप0 ध0 सू0 – 1.10.28.19

9. बौधा0 ध0 सू0 – 1.8.2.

   विष्णु धर्मसूत्र–24.1–4

10. क्लीबं त्यक्तवा पतितं वा याऽन्यं पतिं विन्देत्तस्यां पुनर्भ्यां यो जागस्स पौनर्भवः। बौ02.3.27

11. पाणिग्रहे मृते वाला केवलं मन्त्रसंस्कृता।

    स चेदक्षतयोनिः स्पात्पुनः संस्कारर्महति।। वसिष्ठ0 1.7.74

12. बौ0 2.2.4.7.

13. वसिष्ठ0 – 17.18–20

14. तदेव

15. Ram Gopal-India of Vedic Kalpsutras - P.447

16. 'सुमंगलीयरियं वधूरिमां समेत पश्यत।'

    आश्व0 गृ0 1.8.7; आप0 गृ0 6.11.; काठक गृ0 25.46

17. अस्वतन्त्रा धर्मे स्त्री। गौ0 2.9.1

18. विष्णु–25.16

19. निरिद्रया ह्यदायाश्च स्त्रियों मता इति श्रुतिः। बौ0 2.3.47

20. जायापत्योर्न विभागो विद्यते। पाणिग्रहणाद्धि सहत्वं कर्मसु। आप0 2.14.16.17

21. अपुत्रधनं पत्न्यभिगामि। तदभावे दुहितृगामि। विष्णु0 17.4–5

22. स्त्रीधनं दुहितृणामप्रत्तानामप्रतिष्ठितानां च। गौतम0 3.10.22

    मातुरलंकारं दुहितस्साम्प्रदायिकं लभरेन्नन्यद्वा। बौ0 2.3.44

    मातुः पारिणेयं स्त्रियो विभजेरन्। व0 17.46

23. तथा पुण्यफलेषु। द्रप्यपरिग्रहेषु। आप0 2.14.18.19.

24. कुटुम्बिनौ धनस्येशाते। आप0 2.21.3.

25. आप0 2.26.11.

26. आचार्यः श्रेष्ठो गुरुणां मातेत्येक। गौ0 1.2.53

27. मातापुत्रत्वस्य भूंयासि कर्माण्यारभते तस्यां शुश्रूषा नित्या पतितायामपि। आप0 1.28.1

28. बौ0 ध0 सू0 2.50–42; वसिष्ठ – 5.1

29. स्त्रीशूद्रैनडिभिभाषेत मूत्रपुरीषे नाऽवेक्षेत। बौ0 3.8.22, विष्णु 46.25

30. सकृदुभयं स्त्रियारशूद्रस्य च। बौ0 1.8.17